ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2017; 3(4): 917-921
www.allresearchjournal.com
Received: 19-03-2017
Accepted: 23-04-2017

डॉ. सर्वजीत दुबे
एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत, अकादमिक प्रभारी, गोविंद गुरु जनजातीय विश्वविद्यालय, बांसवाड़ा, राजस्थान, भारत

Corresponding Author:
डॉ. सर्वजीत दुबे
एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत, अकादमिक प्रभारी, गोविंद गुरु जनजातीय विश्वविद्यालय, बांसवाड़ा, राजस्थान, भारत

संस्कृत का भाषावैज्ञानिक एवं दार्शनिक महत्त्व

डॉ. सर्वजीत दुबे

सारांश
संस्कृत भाषा विश्व की प्राचीनतमा भाषा होने के साथ-साथ वैज्ञानिकता एवं दार्शनिकता से परिपूर्ण है। आधुनिक काल में ब्रिटिश विद्वानों को जब इस प्राचीनतम भाषा का ज्ञान हुआ तो उन्हें संस्कृत में विश्व की अन्य प्राचीन एवं आधुनिक भाषाओं का अक्षय स्रोत दिखने लगा। इससे तुलनात्मक भाषाशास्त्र का जन्म हुआ जिसके कारण इस भाषा ने 'किस भाषा से क्या लिया और क्या दिया' विषय पर अनुसंधान शुरू हुआ। संस्कृत भाषा से गहरा परिचय प्राप्त होने पर विद्वानों को पता चला कि वैखरी रूप में व्यक्त होने के पहले वाणी परावाक् पश्यंती और मध्यमा से गुजरकर वैखरी तक पहुंचती है। भाषा वैज्ञानिकों को यह भी पता चला कि अन्य भाषाएं जहां सिर्फ दूसरों के साथ ही जोड़ती हैं, वहां संस्कृत भाषा व्यक्ति को स्वयं के आंतरिक जगत से भी जोड़ती है।

कूटशब्द: तुलनात्मक भाषाशास्त्र, इंद्रियानुभूति, अपरोक्षानुभूति, परा, पश्यन्ती, मध्यमा, वैखरी।

प्रस्तावना
भाषा के माध्यम से ही भाव की अभिव्यक्ति होती है, इसलिए भाषा स्वयं अध्ययन का विषय है। ज्ञान की समस्त शाखाएं भाषा के माध्यम से ही भिन्न-भिन्न रूपों में उजागर हुई हैं। अतएव (1) भाषा अपने आप में क्या है? (2) उसका विकास कैसे हुआ? (3) उसकी उत्पत्ति कैसे हुई? (4) भाषाओं ने भिन्न-भिन्न रूप क्यों धारण किए? (5) भाषा में परिवर्तन क्यों होते हैं? (6) भाषा भेद के कारण क्या है? ---- इस प्रकार के अनेक प्रश्नों ने भाषाविज्ञान को जन्म दिया। इस क्रम में जब भाषाविज्ञानियों का परिचय संस्कृत भाषा से हुआ तो उनके आश्चर्य की सीमा न रही। और इसने एक नए द्वार को खोल दिया जिससे "तुलनात्मक-भाषाशास्त्र" का जन्म हुआ।

दरअसल विलियम जोंस नामक विद्वान ने कोलकाता के सुप्रीम कोर्ट का न्यायाधीश रहते हुए संस्कृत और फारसी भाषाएं सीख लीं और यावनी और लातीनी से वे पूर्व-परिचित थे। संस्कृत भाषा के परिचय से वे इतने मंत्रमुग्ध हो गए कि "Asiatic society of Bengal" की स्थापना की और उसमें उद्घाटन भाषण दिया, जिससे तुलनात्मक-भाषाशास्त्र का आरंभ माना जाता है।

उन्होंने अपने भाषण में बताया कि इन चारों भाषाओं में इतना साम्य है कि या तो इनमें से कोई एक शेष तीन की जननी है या चारों ही किसी एक जननी की पुत्री हैं, जिसकी खोज करनी होगी।

तुलनात्मक भाषा विज्ञान के अध्ययन में फ्रेडरिक ब्राउमर, ब्रोंज बॉप, फ्रैंकलीन एडगर्टन, विंटरनिट्स, विल डुरंट, मैकडोनाल्ड जैसे विद्वानों ने संस्कृत की ग्रीक, लैटिन आदि भाषाओं से समानता को प्रदर्शित किया और संस्कृत भाषा को ही तुलनात्मक-भाषाविज्ञान का जनक माना।

डॉ ओजिल्वी तथा विल्सन ने कहा है कि "Sanskrit the ancient language of Hindus has been termed the language of the languages and it is even regarded as the key to all these termed Indo European including the teautonic family, French, Italian, Spanish, Slavonion, lithuanian, Greek Latin and Celtic"[1].

फ्रेडरिक ब्राउमर ने कहा है कि "The undenied similarities between Sanskrit old Latin and Gothic suggest that all are representative of a single language"[2].

आधुनिकतम भाषा अंग्रेजी और प्राचीनतम भाषा संस्कृत में भी अनेक समानताएं स्पष्ट दिखाई देती हैं जिनके आधार पर संस्कृत का अंग्रेजी पर प्रभाव का पता चलता है। जैसे 'मां' को संस्कृत में 'मातर' बोलते हैं तो अंग्रेजी में उसी को 'मदर' बोलते हैं। 'बेटी' को संस्कृत में 'दुहितर' बोलते हैं तो अंग्रेजी में 'डॉटर' बोलते हैं।

ऐसे अनेक साक्ष्यों के आधार पर आधुनिक विदेशी विद्वानों ने संस्कृत भाषा को न केवल ग्रीक तथा लैटिन जैसी अपनी सांस्कृतिक भाषा से भी अधिक समृद्ध एवं श्रेष्ठ माना बल्कि समस्त यूरोपीय भाषाओं की जननी भी माना।

तुलनात्मक भाषाशास्त्र के नाम पर हुई खोजों के आधार पर पाश्चात्य विद्वानों ने संस्कृत तथा भारत का ऋण तो माना लेकिन साथ ही कुछ ऐसी स्थापनाएं कर गए और कहानियां गढ़ गए कि भारत का राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक वातावरण दूषित हो गया। उनकी निष्पत्तियां शासकों के लिए "फूट डालो और राज करो" की नीति का आधार बनीं। उदाहरण के तौर पर (क) आर्य बाहर से भारत में आए। (ख) विभिन्न प्रकार की जातियों में और भाषाओं में परस्पर संघर्ष हुए जिसमें आर्य जाति और संस्कृत भाषा ने आधिपत्य जमा लिया। (ग) भारत की विभिन्न जातियों और भाषाओं में वर्ण और संरचना की दृष्टि से काफी अंतर था।

ऐसी मान्यताओं और स्थापनाओं का सत्य जानने के लिए संस्कृत भाषा का सिर्फ भाषावैज्ञानिक ही नहीं बल्कि राजनीतिक,सामाजिक और सांस्कृतिक महत्व भी है। सही मायनों में वैश्वीकरण की आधार संस्कृत भाषा है।

विज्ञान के आविष्कारों ने विश्व को एक गांव में बदल दिया। "ग्लोबल विलेज" का अभिप्राय यही है कि कोई भी व्यक्ति या क्षेत्र एक दूसरे से दूर नहीं रहा। किंतु वास्तविकता यह है कि नजदीक भी न हुआ क्योंकि दिलों की दूरियां भाषा, जाति, धर्म, क्षेत्र, राष्ट्र इत्यादि अनेक आधारों पर बहुत बढ़ गई। विज्ञान सिर्फ भौतिक अर्थों में एक दूसरे को नजदीक ला सका किंतु आत्मिक अर्थों में नजदीक लाने का सूत्र अध्यात्मप्रधान संस्कृत भाषा ने दिया है, जो उद्घोषणा करती हैं-

"वसुधैव कुटुंबकम्"[3]

"यंत्र विश्वम् भवत्येकनीडं"[4]

"एकं सद् विप्रा बहुधा वदंति"[5]

कारण यह है कि संस्कृत भाषा व्यष्टि से समष्टि को तथा परमेष्टि को जोड़ती है। उसकी प्रत्येक प्रार्थना में 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म'[6] का भाव झलकता है। इसी को जानकर और समझ कर देश के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित नेहरू ने अपनी पुस्तक 'डिस्कवरी ऑफ इंडिया' में लिखा है "यदि कोई मुझसे पूछता है कि भारत के

पास बहुमूल्य खजाना क्या है और इसके पास सबसे बड़ी धरोहर क्या है तो मैं बेहिचक कह सकता हूं कि वह खजाना संस्कृत भाषा और उसमें निहित समस्त वांग्मय है।यह एक महत्वपूर्ण विरासत है। यह जब तक सक्रिय रहेगी और हमारे सामाजिक जीवन को प्रभावित करेगी, तब तक भारत की आधारभूत बुद्धिमता बनी रहेगी।"

वैश्वीकरण के जमाने में जब लोग एक-दूसरे के नजदीक आ रहे हैं तो उस जमाने में भाषा, जाति, धर्म, क्षेत्र, वर्ण के आधार पर बढ़ती दूरियां चिंता एवं चिंतन का विषय हैं। इसलिए आज के जमाने में कुछ प्रश्नों का सही उत्तर ढूंढना अत्यंत जरूरी हो गया है। वे प्रश्न हैं -

1. हमारे देश की भाषाओं का ऐतिहासिक क्रम क्या है?
2. हमारे देश की भाषाओं का तुलनात्मक स्वरूप क्या है?
3. भाषाओं में जोड़ने वाले सूत्र कौन से हैं?
4. भाषाओं के आधार पर अलगाव की प्रवृत्ति को क्यों बल मिला?
5. विदेशी भाषाविदों ने हमारी भाषाओं का अध्ययन कर जो विभाजक विषवृक्ष बोया है, उसका तथ्यात्मक आधार क्या है?
6. भाषा के कारण देश की राजनीतिक समस्याएं किस रूप में प्रभावित हैं?

यदि किसी चमत्कार से भारत के भाषाशास्त्री यास्क, पाणिनी, कात्यायन, पतंजलि, नागेश, भट्टोजिदीक्षित आदि में से कोई भी आज पुनर्जीवित हो सके और उन्हें भाषाशास्त्रीय अध्ययन में इन प्रश्नों को प्रमुखता से देखने को मिले तो निश्चय ही उन्हें परमाश्चर्य होगा। वे सोचेंगे कि भाषा के अध्ययन के प्रसंग में इन प्रश्नों का औचित्य क्या हैं? निस्संदेह ये प्रश्न भाषाशास्त्र के अध्ययन से असंपृक्त है, इसीलिए प्राचीनों को आश्चर्य होना स्वाभाविक है। लेकिन भाषाशास्त्र के नाम पर जैसी स्थापनाएं दी गई हैं,उनसे हमारा बड़ा अहित हुआ है। इसीलिए भाषाशास्त्र के क्षेत्र में भारतीय विद्वानों द्वारा भारत के लिए भारत की खोज नए ढंग से किए जाने की महती आवश्यकता है। इस पृष्ठभूमि में संस्कृत का महत्व आज जितना बढ़ गया है,उतना शायद पहले नहीं था।

डॉ कुंवर लाल व्यास ने एक पुस्तक लिखी है, इसका नाम है- "भारतीय इतिहास पुनर्लेखन क्यों? तथा पुराणों में इतिहास विवेक"। इस पुस्तक में संस्कृत वांग्मय को आधार मानकर इतिहास के तथ्यों की मीमांसा की गई है। पाश्चात्य विद्वानों ने जो कुछ संस्कृत साहित्य के संबंध में ऐतिहासिक दृष्टि से लिखा है,उसका उन्होंने खंडन किया है। विशेष रूप से उनका लेखन प्रागैतिहासिक तथ्यों पर पुनर्विचार करता है। आर्यों के बाहरी आक्रमण को वे नहीं मानते और इसके विपरीत भारत से आर्य लोगों का विस्तार अन्य देशों में हुआ है, इस बात को प्रमाणित करने के लिए संस्कृत वांग्मय से उन्होंने अनेक उदाहरण भी प्रस्तुत किए हैं। इन उदाहरणों को देखकर प्रतीत होता है कि संस्कृत भाषा के जो लक्षण ग्रीक, लैटिन, अवेस्ता आदि भाषाओं में भाषाविद् बतलाते हैं, उसका कारण यह है कि यहां से संस्कृत भाषा बाहर पहुंची हैं।

दरअसल भारतीय भाषाओं का इतिहास प्रायः विदेशी विद्वानों ने लिखा है। यदि भारतीय विद्वान भारत के इतिहास और भूगोल को आधार बनाकर भाषाओं के आपसी संबंधों पर शोध और पुनर्लेखन करेंगे तो निश्चय ही बहुत से भ्रम दूर होंगे।

डॉ.पंडरीनाथ प्रभु ने अपनी पुस्तक "भारत में शास्त्रों का उद्गम और विकास" में यह बताने का प्रयास किया है कि आधुनिक भाषाओं के लिए पारिभाषिक शब्दों का अक्षय स्त्रोत संस्कृत भाषा है। हमारे अपने देश की भाषाओं से ही संस्कृत भाषा समृद्ध हुई है और पुनः वे ही शब्द हमारी आधुनिक भाषाओं में अपनाए जा रहे हैं । संस्कृत भाषा सामाजिक विचारों को, धारणाओं को, मूल्यों को तथा शिल्प आदि को व्यक्त कर भारतीय भाषाओं को सक्षम बना रही हैं। अतः संस्कृत भाषा को अनुसंधान की भाषा के रूप में देखने की आवश्यकता है।

संस्कृत भाषा हमारी अन्य भारतीय भाषाओं की भी प्राण है। भारत के संविधान में उल्लेख है कि हम भारतीय भाषाओं को सशक्त करेंगे और भारतीय भाषाओं के विकास और समृद्धि के लिए संस्कृत अहम भूमिका निभाएगी।

संस्कृत का प्रभाव कई भारतीय भाषाओं के उदाहरणों में देखने को मिलता है। जैसे यदि संस्कृत में 'आकाश:' बोलते हैं तो हिंदी में 'आकाश', तेलुगु में 'आकाशमु' और कन्नड़ में 'आकाशवु' बोलते हैं। इसी प्रकार संस्कृत में यदि 'भूमि:' बोलते हैं तो हिंदी,तेलुगु और कन्नड़ में भी 'भूमि' ही बोलते हैं।

संस्कृत भाषा का दार्शनिक महत्व

पाश्चात्य दर्शन जगत में संस्कृत में लिखी कुछ भारतीय पुस्तकों पर विशेष शोध कार्य चल रहा है, उनमें से एक पुस्तक है भर्तृहरि की "वाक्यपदीय"। भाषा दर्शन जैसे गूढ विषय में पाश्चात्य जगत का प्रवेश नया एवं सतही है जबकि संस्कृत मनीषियों का चिंतन इस विषय में इतना प्राचीन और इतना गहरा है कि उसकी भनक लगते ही वे इस दृष्टि से संस्कृत को विशेष समादर देने लगे हैं। दरअसल भारतीय भाषादर्शन मात्र बौद्धिक तथा तार्किक विवेचन ही नहीं है वरन् इसके मूल में भारतीय आध्यात्मिकता है। पाश्चात्य भाषादर्शन अनुभववाद की चरम परिणति है। वहां के दार्शनिकों ने भाषा की सार्थकता-निरर्थकता, नैतिक, धार्मिक कथनों तथा भावनाओं की अभिव्यक्ति से संबंधित समस्याओं पर ही विचार किया है। उनकी मान्यता है कि तत्वमीमांसा संभव नहीं है। अतः पाश्चात्य भाषादर्शन एकांगी है।

भारतीय भाषा दर्शन में सभी संभावित दृष्टि से विचार किया गया है। यहां अनुभव को मात्र सामान्य अनुभव (इंद्रियानुभव) के रूप में नहीं लिया गया है बल्कि उच्चतर अनुभव (अपरोक्षानुभूति) के रूप में भी लिया गया है। यहां अनुभववादी, बुद्धिवादी, वस्तुवादी, प्रत्ययवादी, निषेधवादी (अपोहवादी), अनेकांतवादी सभी दृष्टियों से भाषादर्शन की समस्याओं पर विचार किया गया है।

वैदिक ऋषियों ने लोगों को उस 'वाक्' तक जाने का निर्देश दिया है जो अव्यक्त है तथा जो हमारी भाषा में आभासित हो रही है। उपनिषदों ने इस बात पर जोर दिया कि भाषा के तत्व की उच्चतर सत्ता है। हम जो बोलते हैं, वह भाषा नहीं है तथा जो भाषा है,वह बोली नहीं जा सकती। वाणी उस उच्चतर भाषा का संकेत मात्र करती है। प्रातिशाख्यों में माना गया कि भाषा में एकता (संहिता) मूल है तथा शब्दों की विविधता (पद) से पूर्व है। निरुक्त के लेखक ने भाषा के एकात्मक गुण को तार्किक तथा वाक्य विश्लेषण के द्वारा दिखाया। कात्यायन ने माना कि शब्द तथा उनके अर्थ के संबंध नित्य है। पतंजलि ने समस्त भाषा दर्शन को बड़े ही विद्वतापूर्ण ढंग से संक्षेप किया तथा स्फोट सिद्धांत का प्रतिपादन किया। भर्तृहरि ने पतंजलि के सिद्धांत का विस्तार किया तथा उच्चतर भाषा सिद्धांत को उच्चतर स्थान प्रदान किया। कैयट,नागेश तथा अन्यों ने उनका अनुसरण किया तथा यह प्रतिपादित किया कि हम जो भाषा बोलते हैं, वह केवल ध्वनि हैं जो विभिन्न भाषाओं का निर्माण करती हैं।

जहां पाश्चात्य भाषादर्शन का क्षेत्र एवं सीमा वैखरी तक है, वहां भारतीय भाषादर्शन परावाक् से चलकर पश्यन्ती, मध्यमा होते हुए ही वैखरी तक पहुंचता है। वैदिक ऋचाओं में वाक् का तादात्म्य प्रकृति से है तो कभी प्रजापति से (वाक् वै प्रजापति:), वही मनस् है तो वही प्राण है (प्रजापति वै मन:, प्राण प्रजापति:)। इसी तथ्य को वाक्यपदीय में भर्तृहरि ने कहा है कि विचार एवं भाषा का तादात्म्य है -

"न सोअस्ति प्रत्ययोलोके य: शब्दानुगमादृते
अनुविद्धमिवा ज्ञानं सर्वं शब्देन भासते।।"[7]

सब कुछ शब्द से ही जाना जाता है। यह व्यावहारिक जगत शब्द से सर्वथा ज्ञेय है। यहां शब्द से परे कुछ भी नहीं है। इसीलिए ऋग्वेद में वाक् की वही प्रतिष्ठा है जो ब्रह्म की-"यावद् ब्रह्मा विष्ठीतम् तावती वाक्"[8].

मैक्समूलर ने भारतीय ग्रंथ और समाज का गहन अध्ययन कर 1882 में "India what can it teach us"

पुस्तक लिखी जिसका संदेश यह है कि भारत से बहुत कुछ सीखने को है। पूर्व केंद्रीय मंत्री श्री बलराम जाखड़ ने एक अवसर पर कहा था कि-"आज संस्कृत को हमारी आवश्यकता नहीं, बल्कि हमें संस्कृत की आवश्यकता है। आज जब नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है, मानवता आपस में टकरा रही है; ऐसे में संस्कृत की ओर ध्यान देना बहुत जरूरी है क्योंकि वास्तव में भारत की आत्मा देववाणी संस्कृत ही है।"

वैश्वीकरण के इस युग में मनुष्य का बाह्य जगत निश्चितरूपेण बहुत विस्तृत हुआ है।बाह्य जगत के लिए भाषाएं अनिवार्य हैं। अतः नई-नई भाषाएं सामने आ रही हैं। लेकिन बाहरी जगत के साथ-साथ आंतरिक जगत भी है, जो उतना ही महत्वपूर्ण है। विडंबना यह है कि आज व्यक्ति जितना बाहरी जगत से जुड़ता जा रहा है,उतना ही आंतरिक जगत से टूटता जा रहा है। कनाडा के प्रतिभाशाली विचारक मार्शल मैक्लुहान ने अपनी क्रांतिकारी पुस्तक "The Global Village" में आधुनिक मनुष्य की इस त्रासदी का तफ्सील से जायजा लिया है। वह कहता है कि आज हर मनुष्य एक ही समय पर हर कहीं है, हर किसी के साथ है, सिर्फ स्वयं के साथ नहीं है। दूसरों से जुड़ने के लिए भाषा की आवश्यकता है किंतु स्वयं से जुड़ने के लिए किसी भाषा की आवश्यकता नहीं है। उस आंतरिक यात्रा में विश्व की सारी भाषाएं भले ही नाकाम सिद्ध होती हों लेकिन संस्कृत एकमात्र ऐसी भाषा है जिसमें उस यात्रा के लिए मील के पत्थर गढ़े हुए हैं। भारतीय ऋषियों ने "को अहम्" से यात्रा प्रारंभ कर "अहम् ब्रह्मास्मि" की मंजिल पाई। भारत को विश्व गुरु की पदवी दिलाने वाली संस्कृत भाषा को पढ़ने वाले भले ही आज के युग में अपना भविष्य अंधकारमय देखते हों क्योंकि बहुत बड़े रोजगार की संभावना इसमें नहीं दिखती; लेकिन मैं यह कहना चाहता हूं कि यह अंधकार भी कोई ऐसा वैसा अंधकार नहीं है। डॉ अंजना रानी, दर्शनशास्त्री के शब्दों में "यह मां के गर्भ का अंधकार हैं ,जहां परम शांति का अनुभव होता है।"

संदर्भ

1. Quoted in "Sanskrit, the parent language. By Jagannath Prasad; p. 2.
2. Quoted in "Sanskrit, the parent language. By Jagannath Prasad; p. 2.
3. महोपनिषद् .अध्याय 6 मंत्र 11
4. यजुर्वेद.32/8
5. ऋग्वेद.1/164/46
6. छांदोग्य 3/14/1
7. वाक्यपदीय 1/123
8. ऋग्वेद 10/114/8